मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य

बनाम

बच्चा लाल एवं अन्य

21 जून, 2007

[डॉ. अरिजीत पासायत और अल्तमस कबीर, न्यायधीशगण]

एमपी. सामान्य बिक्री कर अधिनियम, 1958 की धारा 48, आदेश 23 नियम 1 (3) (a) सिविल प्रक्रिया सहिता 1908, दंड संहिता, 1860 की धारा 353, दंड प्रकिया संहिता, 1973 की धारा 197

अवैध संतुष्टि-बिक्री कर अधिकारी अवैध संतुष्टि प्राप्त करने के लिए प्रतिवादी व्यवसायी को कथित रूप से परेशान करता है-1958 के अधिनियम की धारा 48 के संदर्भ में राज्य सरकार से अनुमति प्राप्त किए बिना अधिकारी के खिलाफ मुकदमा दायर करना- वाद की पोषनियता- अभिनिर्धारित: अधिकारी द्वारा किए गए कार्य अधिनियम के तहत उसे सौंपे गए कर्तव्यों के निर्वहन में थे-ट्रायल कोर्ट ने यह अभिनिर्धारित करते हुए उचित ठहराया कि अधिकारी पर मुकदमा चलाने के लिए राज्य सरकार की पूर्व मंज़ूरी के अभाव में, मुकदमा विचारणीय नहीं था-उच्च न्यायालय ने कानून के प्रावधानों पर उचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया है।

वादी/प्रत्यर्थी व्यवसाय करने वाले भाई हैं।संदर्भित समय में अपीलार्थी नं. 2 अपीलार्थी नं. 1 के नियोजन में , मध्य प्रदेश राज्य में बिक्री कर

अधिकारी थे।प्रत्यर्थियों ने आरोप लगाया कि अपीलकर्ता संख्या 2 ने उनसे अवैध संतुष्टि प्राप्त करने के लिए एम. पी. सामान्य बिक्री कर अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के तहत अवैध तलाशी और जब्ती की और कर की भारी मांग की, उनके बिक्री कर पंजीकरण प्रमाणपत्र को रद्द कर दिया और भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 353 के तहत पुलिस में एक रिपोर्ट भी दर्ज कराई, जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी संख्या 2 पर मुकदमा चलाया गया।हालांकि, बाद में उन्हें बरी कर दिया गया। प्रत्यर्थीगण ने दुर्भावनापूर्ण अभियोजन के कारण नुकसान का दावा किया।उन्होंने दावा किया कि अपीलार्थी संख्या 2 द्वारा दर्ज की गई रिपोर्ट सत्य नहीं थी और 'अधिनियम'की धारा 48 के प्रावधानों को देखते हुए मुकदमा वर्जित रहा है।

ट्रायल कोर्ट ने कहा कि मुकदमा विचारणीय नहीं था क्योंकि अधिनियम की धारा 48 के तहत राज्य सरकार की अनुमति की आवश्यकता होती है। तदनुसार निचली अदालत ने निर्देश दिया कि आदेश 23 नियम 1 (3) (ए) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के तहत मुकदमा वापस लेने की अनुमति इस स्वतंत्रता के साथ दी कि वे अधिनियम की धारा 48 के संदर्भ में राज्य सरकार से आवश्यक अनुमति प्राप्त करने के बाद नया मुकदमा दायर कर सकते हैं। प्रत्यर्थियों ने निचली अदालत के आदेश को इस आधार पर चुनौती दी कि वाद में दर्शाया गया वाद कारण अपीलार्थी नंबर 2 द्वारा धारा 353 आई पी सी के अधीन दी गई रिपोर्ट के आधार पर दर्ज कराए गए दुर्भावनापूर्ण अभियोजन का था और इसलिए,

अधिनियम की धारा 48 के तहत अनुमति मांगने का सवाल नहीं उठता है। इस याचिका को उच्च न्यायालय ने स्वीकार कर लिया।इसलिए, वर्तमान अपील।

प्रत्यर्थी ने प्रस्तुत किया कि दुर्भावनापूर्ण अभियोजन से संबंधित मामले में धारा 197 द. प्र. स. का सिधान्त लागू किया जाना था और अधिनियम का क्षेत्रधिकार से कोई लेना-देना नहीं है।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने निर्धारित किया:

1. 1.धारा 197 द. प्र. स. की भाषा कुछ अलग है।एम. पी. सामान्य बिक्री कर अधिनियम की धारा 48 में उपयोग की जाने वाली भाषा अधिनियम के तहत किए गए या किए जाने वाले कार्यों से संबंधित है। इसके अलावा धारा 48 की उप-धारा 1 (ए) में यह प्रावधान है कि राज्य सरकार का कोई भी अधिकारी या कर्मचारी उप-धारा (1) में निर्दिष्ट किसी भी ऐसे कृत्य के संबंध में उत्तरदायी नहीं होगा, जिसके लिए उस पर लगाए गए कर्तव्य के निष्पादन या अधिनियम द्वारा या उसके तहत उसे सौंपे गए कार्य के निर्वहन के दौरान सद्भावना से कार्य किया गया था, और यह शक्ति सिविल और आपराधिक कार्यवाही दोनों से संबंधित है। [पैरा 12]

1. 2.अपीलार्थी सं. 2 द्वारा किए गए कार्य अधिनियम के तहत उसे सौंपे गए कर्तव्यों के निर्वहन में थे। ऐसा होने पर निचली अदालत ने यह अभिनिर्धारित करना उचित ठहराया कि अधिनियम की धारा 48 स्पष्ट रूप

से लागू होती है।उच्च न्यायालय ने कानून के प्रासंगिक प्रावधानों पर उचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया है। [पैरा 12]

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः 2007 की सिविल अपील सं. 2904

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के द्वारा एम. ए. सं. 1674/1997 पर दिए गए अंतिम निर्णय और आदेश से।

अपीलार्थियों की ओर से सिद्धार्थ दवे, विभा दत्ता मखीजा और धर्मेंद्र कुमार सिन्हा।

प्रत्यर्थीगण के लिए बी. के. सतीजा।

न्यायालय का निर्णय डॉ. अरिजीत पासायत, न्यायाधीश द्वारा दिया गया।

1. अनुमति दी गई ।

2. इस अपील में चुनौती मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश जो कि उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती विविध अपील में थी। अपील जो बाद में सिविल सूट संख्या 4-बी/92 में दिनांकित 15.11.1995 के फैसले से संबंधित Misc.B अपील में परिवर्तित हो गई है, जिसे एक विद्वान द्वितीय अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, शहडोल द्वारा मुकदमे में बनाए गए मुद्दे संख्या 7 का निर्णय लेते हुए पारित किया गया है।

3. संक्षेप में पृष्ठभूमि के तथ्य इस प्रकार हैं: वादी/प्रत्यर्थी शहडोल में साझेदारी में व्यवसाय करने वाले भाई हैं।वर्ष 1981 में प्रासंगिक समय पर अपीलार्थी सं. 2 अपीलार्थी सं. 1 मध्य प्रदेश राज्य के अधीन बिक्री कर अधिकारी थे।वादी उत्तरदाताओं द्वारा यह प्रतिवाद किया गया कि अपीलकर्ता संख्या 1 ने अवैध संतुष्टि प्राप्त करने और उत्तरदाताओं पर दबाव बनाने के लिए कार्यालय का दुरुपयोग करते हुए, एम. पी. सामान्य बिक्री कर अधिनियम, 1958 (इसके बाद संक्षेप में 'अधिनियम'के रूप में संदर्भित) के प्रावधानों के तहत अवैध तलाशी और जब्ती की।उन्होंने कर और जुर्माने की भारी मांग निकाली और अपीलकर्ताओं के बिक्री कर पंजीकरण प्रमाण पत्र को भी रद्द कर दिया।प्रत्यर्थी संख्या 1 ने भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में 'आई. पी. सी.') की धारा 353 के तहत पुलिस में एक रिपोर्ट भी दर्ज की, जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी संख्या 2 पर मुकदमा चलाया गया।

हालांकि बाद में उन्हें बरी कर दिया गया था। इसलिए, प्रत्यर्थियों ने दुर्भावनापूर्ण अभियोजन के कारण हर्जाने का दावा किया, जैसा कि शिकायत के पैरा 10 से स्पष्ट है।

प्रतिवादियों/अपीलार्थियों ने दावे का विरोध किया। उन्होंने कहा कि प्रतिवादी/अपीलार्थी संख्या 1 द्वारा दर्ज की गई रिपोर्ट सही नहीं थी। यह झूठ पर आधारित था।यह भी दलील दी गई कि 'अधिनियम'की धारा 48 के प्रावधानों के अधीन मुकदमा विधि द्वारा बाधित था।

4. विद्वत विचारण न्यायालय ने विवाध्यक संख्या 7 सहित कई विवाध्यत नियत किए कि क्या अधिनियम की धारा 48 के प्रावधान अनुरूप प्रतिवादी संख्या 2 के खिलाफ मुकदमा विचारणीय नहीं था।

5. शुरू में मामला सभी मुद्दों पर साक्ष्य दर्ज करने के लिए तय किया गया था।हालाँकि, बाद में अपीलकर्ताओं की प्रारंभिक विवाध्यक संख्या 7 पर विचारण करने की प्रार्थना को स्वीकार कर लिया गया और इस पर पक्षों को सुनने के बाद विवाध्यक विचारण अदालत ने अभिनिर्धारित किया कि मुकदमा विचारणीय नहीं है।

6. निचली अदालत ने माना कि वर्तमान प्रतिवादियों की मूल शिकायत तलाशी लेने में वर्तमान अपीलार्थियों के अधिकारियों की कार्रवाई और आधिकारिक कर्तव्यों में कथित बाधाओं से संबंधित है।इसलिए यह अभिनिर्धारित किया गया कि मुकदमा विचारणीय नहीं था क्योंकि अधिनियम की धारा 48 के तहत राज्य सरकार की अनुमति की आवश्यकता होती है। तदनुसार निचली अदालत ने निर्देश दिया कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में 'सी. पी. सी.') के आदेश 23 नियम 1 (3) (ए) के तहत मुकदमे को इस स्वतंत्रता के साथ वापस लेने की अनुमति दी जाए कि वे राज्य सरकार से आवश्यक अनुमति प्राप्त करने के बाद नया मुकदमा दायर कर सकते हैं।

7. प्रत्यर्थियों द्वारा इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि वाद में दर्शाया गया वाद कारण आई. पी. सी. की धारा 353 के तहत प्रतिवादी संख्या 2

की रिपोर्ट के आधार पर दुर्भावनापूर्ण अभियोजन पर आधारित था और इसलिए, अधिनियम की धारा 48 के तहत अनुमति लेने का सवाल ही पैदा नहीं होता है।

8.उच्च न्यायालय ने याचिका को स्वीकार कर लिया और कहा कि धारा 48 लागू नहीं है।

9. अपील के समर्थन में यह प्रस्तुत किया कि धारा 48 को पढ़ने मात्र से स्थिति स्पष्ट हो जाती है कि उच्च न्यायालय का निर्णय सही नहीं है।

10. दूसरी ओर प्रत्यर्थी के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि दुर्भावनापूर्ण अभियोजन से संबंधित मामले में धारा 197 Cr.P.C का सादृश्य लागू किया जाना था और अधिनियम का उक्त अधिकार क्षेत्र से कोई लेना-देना नहीं है।

11. अधिनियम की धारा 48 इस प्रकार हैः

(1) राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी के बिना, इस अधिनियम के तहत किए गए या किए जाने वाले किसी भी कार्य के लिए राज्य सरकार के किसी भी अधिकारी या कर्मचारी के खिलाफ कोई मुकदमा, अभियोजन या अन्य कार्यवाही नहीं होगी।

(1 -क) राज्य सरकार का कोई भी अधिकारी या कर्मचारी किसी भी दीवानी या आपराधिक कार्यवाही में ऐसे किसी भी कार्य के संबंध में उत्तरदायी नहीं होगा यदि यह कार्य कर्तव्यों के निष्पादन के दौरान सद्भावना से किया

गया था।उस पर अधिरोपित या इस अधिनियम द्वारा या उसके तहत उसे सौंपे गए कार्य का निर्वहन।

(2) इस अधिनियम के तहत किए गए या किए जाने के इरादे वाले किसी भी काम के संबंध में राज्य सरकार के खिलाफ कोई मुकदमा दायर नहीं किया जाएगा और राज्य के किसी भी कर्मचारी के खिलाफ कोई मुकदमा या अभियोजन दायर नहीं किया जाएगा जब तक कि अधिनियम की शिकायत की तारीख से तीन महीने के भीतर मुकदमा या अभियोजन शुरू नहीं किया गया हैः

(बशर्ते कि इस उप-धारा के तहत परीसीमा की अवधि की गणना करने में, उप-धारा (1) के तहत मंजूरी प्राप्त करने में लगने वाले समय को बाहर रखा जाएगा।)

12. धारा 197 द.प्र.स.की भाषा कुछ अलग है।अधिनियम की धारा 48 में उपयोग की गई भाषा अधिनियम के तहत किए गए या किए जाने वाले कार्यों से संबंधित है। इसके अलावा धारा 48 की उप-धारा 1 (ए) में यह प्रावधान है कि राज्य सरकार का कोई भी अधिकारी या कर्मचारी उप-धारा (1) में निर्दिष्ट किसी भी ऐसे अधिनियम के संबंध में उत्तरदायी नहीं होगा, जिसके लिए उस पर लगाए गए कर्तव्य के निष्पादन या अधिनियम द्वारा या उसके तहत उसे सौंपे गए कार्य के निर्वहन के दौरान सद्भावना से कार्य किया गया था और यह शक्ति सिविल और आपराधिक कार्यवाही दोनों से संबंधित है। निर्विवाद रूप से एक छापा मारा गया।ऐसा प्रतीत होता है कि

छापेमारी कथित तौर पर अधिनियम की धारा 29 के तहत की गई थी। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि अधिनियम की धारा 48 के संदर्भ में आवश्यकताएं पूर्ण हैं। प्रत्यर्थी के विद्वान वकील ने इस बात पर प्रकाश डाला कि बरी किए जाने के आदेश मात्र के अवलोकन से पता चलता है कि बरी किया जाना कथित रूप से इस निष्कर्ष के आधार पर दर्ज किया गया था कि आरोपी ने अधिकारियों को तलाशी लेने से रोका और उसने बिक्री कर अधिकारी और उसके अधीनस्थों के साथ दुर्व्यवहार किया।केवल कथित दुर्व्यवहार और धमकी के आधार पर आई. पी. सी. की धारा 353 लागू की गई थी।तलाशी से पहले कारणों की गैर-रिकॉर्डिंग से संबंधित तर्क। इस तरह के दृष्टिकोण की शुद्धता संदेह के लिए खुली है लेकिन जहां तक वर्तमान विवाद का संबंध है, वास्तव में इसकी कोई प्रासंगिकता नहीं है। निर्विवाद रूप से किए गए कार्य अधिनियम के तहत सौंपे गए कर्तव्यों के निर्वहन में थे। ऐसा होने पर निचली अदालत ने यह अभिनिर्धारित करना उचित ठहराया कि अधिनियम की धारा 48 स्पष्ट रूप से लागू होती है। उच्च न्यायालय ने कानून के प्रासंगिक एफ प्रावधानों पर उचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया है।उच्च न्यायालय का फैसला तदनुसार अपास्त किया जाता है।

13. अपील स्वीकार। खर्च के सम्बन्ध में कोई आदेश नहीं।

एसकेएस.   अपील स्वीकार।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक सेवानिवृत न्यायिक अधिकारी रविन्द्र कुमार माहेश्वरी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।